प्रतिदिन

सबसे बड़ा कर्जदार

एक पुराना चुटकुला है अगर आपकी देनदारी एक लाख रुपये है, तो आप कर्जदार हैं. अगर आपकी देनदारी एक करोड़ रुपए है, तो आप व्यापारी हैं. अगर देनदारी एक अरब रुपये है, तो आप उद्योगपति हैं. और अगर यह एक हजार अरब रुपए है, तो आप सरकार हैं. यानी आपकी सत्ता कितनी बड़ी है, यह इस पर निर्भर करता है कि आप पर कर्ज कितना है? इसका एक अच्छा उदाहरण अमेरिका है. वह दुनिया की सबसे बड़ी ताकत ही नहीं, दुनिया का सबसे बड़ा कर्जदार भी है. अमेरिकी सरकार पर कुल कितना कर्ज है? हाल-फिलहाल के आंकड़ों के हिसाब से अमेरिका पर कुल कर्ज 271अरब डॉलर है, जो लगातार बढ़ रहा है. इसको इस तरह से भी समझाया जाता है कि अगर एक-एक हजार डॉलर के नोट एक के ऊपर एक रखे जाएं, तो इस रकम की कुल ऊंचाई 1,400 मील होगी. और अगर इसकी जगह एक-एक डॉलर के नोट रखे जाएं, तो चांद तक पहुंच जाएगा. एक दूसरी तरह से इसे ऐसे भी समझ सकते हैं कि अमेरिका का कर्ज प्रति अमेरिकी नागरिक 66,000 डॉलर है. कुछ दिन पहले कुछ अर्थशात्रियों ने इस पर एक दिलचस्प चर्चा की. विषय था कि अगर किसी वजह से अमेरिका इस कर्ज को चुकाने से इन्कार कर दे, तो क्या होगा? या उसकी हालत इतनी खस्ता हो जाए कि वह चुकाने की स्थिति में ही न रह जाए, तो क्या होगा? दोनों ही चीजें असंभव-सी लगती हैं, पर आशंकाओं की चर्चा तभी ज्यादा दिलचस्प होती है, जब उसमें असंभव का तत्व मौजूद हो.

ऐसा नहीं है कि यह कोई ऐसी चीज है, जो दुनिया में कभी हुई ही नहीं. दुनिया के बहुत से देश ऐसी स्थिति में आए हैं, जहां वे कर्ज चुकाने की हालत में नहीं रह गए. फिलहाल हमारे पड़ोसी पाकिस्तान की भी यही हालत है. वह विश्व बैंक से लेकर मुद्रा कोष जैसी कई संस्थाओं का कर्ज चुकाने की स्थिति में नहीं रह गया है और अब उसे आर्थिक संकट से उबारने की तैयारियां चल रही हैं. अर्जेंटीना और रूस जैसे बड़े देश भी इस स्थिति में फंस चुके हैं, लेकिन जल्द इससे उबर भी गए. लेकिन अमेरिका का मामला इतना सरल नहीं है. अमेरिका की अर्थ-व्यवस्था अगर डूबती है, तो कोई भी संस्था या देश इस स्थिति में नहीं है कि इतनी बड़ी आर्थिक ताकत वाले देश को संकट से वह उबार पाए.

सच यह है कि अमेरिका की अर्थव्यवस्था के डूबने का अर्थ होगा, पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था का डूब जाना. सबसे बड़ा प्रभाव तो यह होगा कि पूरी दुनिया की वित्त व्यवस्था ही डूब जाएगी, क्योंकि अमेरिका ही दुनिया के वित्त बाजार की धुरी है. दुनिया भर की ब्याज दरों से लेकर निवेश का भूगोल उसी की वित्तीय नीतियों से तय होता है. पूरी दुनिया के लोगों पर पड़ने वाले इसके असर इतने बड़े होंगे कि शायद हम अभी उसकी ठीक से कल्पना भी नहीं कर सकते. सबसे पहले तो उद्योग बंद होंगे और बेरोजगारी बहुत तेजी से बढ़ेगी. जो उद्योग चल रहे होंगे, हो सकता है कि वे कर्मचारियों को ठीक से वेतन देने की स्थिति भी न रहें. जिन्हें पूरा वेतन मिल भी रहा होगा, उनकी स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं होगी, महंगाई इतनी ज्यादा बढ़ जाएगी कि कोई भी वेतनवृद्धि अपर्याप्त होगी. ये सारे अनुमान हैं, जो अर्थशात्रियों ने लगाए हैं. अमेरिकी फेडरल रिजर्व के पूर्व अध्यक्ष एलन ग्रीनस्पैन का कहना है कि किसी भी सूरत में यह स्थिति नहीं आएगी. हमें भी यही उम्मीद बांधनी चाहिए.

बदले हालात में...

अब तो वैर बेल फैल गई!

जरा अंदाजा लगाइए कि 2014 के पहले भाजपा में ही लालकृष्ण आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी, सुषमा स्वराज, राजनाथ सिंह, नितिन गडकरी जैसे तमाम नेताओं की लोकप्रियता के अपने-अपने दायरे हुआ करते थे. अब मोदी और अमित शाह के अलावा शायद ही किसी की पूछ होती है.

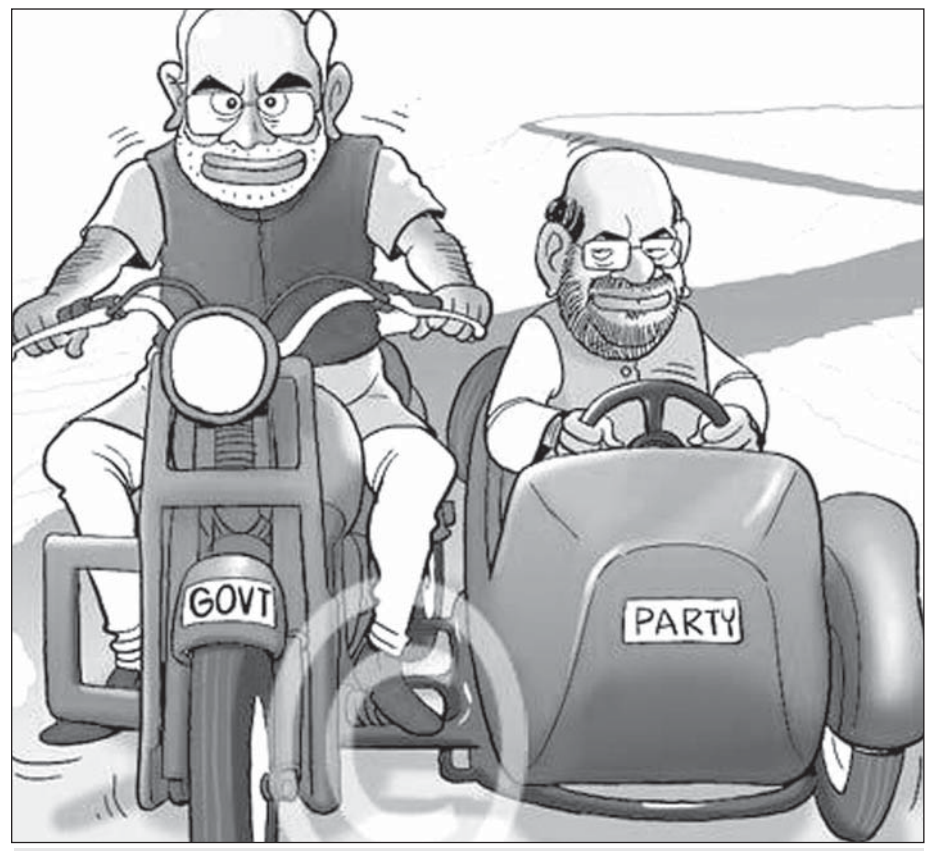

यह केंद्रीकरण सभी को अपने मातहत करने, अपनी मर्जी से सब कुछ चलाने की भूख भी पैदा करता है, जो सभी संस्थाओं को नष्ट कर रहा है. मामला सीबीआई और आरबीआई का ही नहीं है, शायद गैरबैंकिंग संस्थाओं और बैंकों के ढहने के रूप में और बड़ा संकट कगार पर खड़ा इंतजार कर रहे हैं कि अमेरिका में लीमन बदर्स के डूबने जैसा संकट आ सकता है.

राजकाज और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के विचलन पर अंकुश रखने वाली संस्थाओं की बबार्दी का मानो अब अगला दौर शुरू होने को है. केंद्रीय जांच एजेंसी (सीबीआई) का विवाद अब हदें लांघ कर संघीय ढांचे के सामने नये सवाल पैदा करने लगा है. आंध्र प्रदेश की तेलुगू देशम की चंद्रबाबू नायडू सरकार ने सीबीआई को अपनी मंजूरी हटा ली है, और प.बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी भी उसी राह चलने का ऐलान कर चुकी हैं.

22 नवम्बर को दिल्ली में नायडू के बुलावे पर विपक्षी दलों की बैठक हो रही है. इसके बाद इसका दायरा विपक्ष शासित राज्यों तक बढ़ने और केंद्र-राज्य टकरावों का बड़ा दौर शुरू होने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता. इससे बतौर संस्था सीबीआई का बचा-खुचा इकबाल भी जाता रहेगा. सुप्रीम कोर्ट के समक्ष भी नई चुनौती पेश हो सकती है कि उच्च पदों पर भ्रष्टाचार से इस निवारक संस्था को कैसे बचाया जाए.

उधर, आरबीआई के केंद्रीय बोर्ड की बैठक 19 नवम्बर को है, जिसमें नजर रहेगी कि उसका रुख सरकार को राहत देता है, या टकराव के अगले दायरे में बढ़ चलता है. अगर आरबीआई टकराव की राह से हट जाता है तब भी कई बड़े सवाल आसानी से हल होते नहीं दिखते. सरकार की ओर से दोनों तरह के संकेत हैं.

कथित तौर पर पीएमओ में बातचीत के बाद आरबीआई के गवर्नर उर्जित पटेल के रुख नरम पड़ने के संकेत हैं. ऐसी खबरें भी हैं कि उर्जित पटेल शायद इस्तीफा न दें. वित्त मंत्री अरुण जेटली की ओर से इस मामले में बयानों की झड़ी भी कुछ घटी है, या यूं कहें कि मोर्चे पर दूसरे आगे आ गए हैं.

आरबीआई बोर्ड में सरकार के नामित सदस्य एस. गुरुमूर्ति ने हाल में कहा कि नोटबंदी नहीं की जाती तो अर्थव्यवस्था बर्बाद हो जाती. कथित तौर पर नोटबंदी के सूत्रधारों में माने जाने वाले आरएसएस से जुड़े गुरुमूर्ति का बयान नोटबंदी के पहले आरबीआई की 8 नवम्बर, 2016 को शाम 5.30 बजे की बैठक के मिनिट्स के खुलासे के बाद आया है, जिसमें नोटबंदी के लिए सरकार के बताए लक्ष्यों को बेमानी करार दिया गया था. तो, क्या गुरुमूर्ति सीधे टकराव का संकेत दे रहे हैं.

हालांकि इसके पहले दलील दी गई थी कि अब हालात बदल गए हैं. इसलिए आरबीआई को इतनी राशि संरक्षित रखने की दरकार नहीं है. लेकिन जिन अर्थशास्त्रियों की सलाह पर नोटबंदी जैसी कसरत की गई, उनकी नई सलाह को भी आरबीआई के जानकार अर्थशास्त्री संदेह की नजर से ही देखेंगे. वैसे, नोटबंदी के बारे में प्रधानमंत्री ने हाल में छत्तीसगढ़ की एक चुनावी सभा में कहा, ₹कांग्रेस के लोग बिस्तर और बोरों में भरकर नोट रखते थे. मोदी ने नोटबंदी करके नोट निकाल लिया. कोई नहीं रो रहा है. बस एक परिवार रो रहा है.'

यह कयास भी कई हलकों में लगाया ही जाता है कि नोटबंदी का मकसद 2017 में उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों के पहले विपक्षी दलों को नकदी से खाली कर देना था. जो भी हो, लेकिन नोटबंदी के सार्थक नतीजे तो शायद आरबीआई अभी नहीं खोज पाया है. जहां तक सीबीआई का मामला है, सुप्रीम कोर्ट के ताजा रुख पर एक कयास यह है कि मामला खिंचेगा. एक अखबार ने तो यह भी खबर कर दी कि शायद सीबीआई निदेशक अलोक वर्मा को जनवरी में रिटायर होने तक दोबारा पदभार संभालने का मौका न मिल पाए. लेकिन इससे समस्या आसान होने वाली नहीं लगती.

विपक्ष का रुख जैसा दिख रहा है, वह नये संकट की ओर ही इशारा कर रहा है. देश की फिक्र करने वाला कोई भी ऐसे हालात पैदा होने से चिंतित होगा. फिर केंद्र में सत्तासीन लोगों की यह महती जिम्मेदारी भी है कि वे प्रमुख संस्थाओं की अहमियत बनाए रखें और संसदीय प्रणाली के संघीय ढांचे को बरकरार रखें. लेकिन इसके लिए जाहिर है, सभी को समान रूप से तरजीह देने की राजनीति ही कारगर हो सकती है, न कि सारी शक्तियों को अपने इर्द-गिर्द समेट लेने या बेहद केंद्रीकरण की राजनीति. आज का असली संकट शायद यही है कि सारी शक्तियां एक नेता में सिमट आई हैं, और अलग राय रखने वाला हर कोई ₹पराया' या ₹दुश्मन' माना जाता है.

सीबीआई की मंजूरी वापस लेने के लिए चंदबाबू नायडू ने कहा, ₹अब सीबीआई समेत तमाम केंद्रीय एजेंसियों को केंद्र में शीर्ष पर बैठे एक-दो व्यक्ति अपने फायदे और दूसरों को ब्लैकमेल करने के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं.' यह आरोप सिर्फ नायडू, ममता, अरविंद केजरीवाल, राहुल गांधी और तमाम विपक्षी नेता ही नहीं लगा रहे हैं, बल्कि इसका संकेत फिलहाल एनडीए में मौजूद दल भी दे रहे हैं.

भाजपा के भीतर भी ऐसी फिजा महसूस की जा सकती है. शिवसेना खुलकर बोल रही है, तो कुछ दूसरे दबी आवाज में ऐसा संकेत दे रहे हैं. एहसास होना चाहिए कि 2014 के चुनावों में भी एनडीए की जीत की एक बड़ी वजह उसके तहत ज्यादा बड़ा गठबंधन का होना था. यह लगभग नब्बे के दशक से ही चला आ रहा है कि जिसका जितना बड़ा गठबंधन, जीत उतनी पक्की. लेकिन उसके बाद एनडीए में न सिर्फ दूसरे दलों की अहमियत घटती गई, बल्कि भाजपा अपने भारी विस्तार के एजेंडे में उनके लिए खतरा भी बनने लगी.

ऐसा दूसरे दलों के ही मामले में नहीं हुआ, भाजपा में तमाम दूसरे नेता भी हाशिए पर ढकेल दिए गए. यहां तक कि सरकार में भी किसी मंत्री की कोई खास भूमिका नहीं रह गई. सब कुछ सीधे पीएमओ से अपने खास अफसरों के बूते होने लगा. फिर क्या था, यह एनडीए या भाजपा की सरकार नहीं, बल्कि मोदी सरकार कही जाने लगी. मोदी ही इकलौते लोकप्रिय नेता, मोदी ही हर राज्य में इकलौते चुनाव प्रचारक हो गए. यहां तक कि स्थानीय निकाय के चुनावों में भी मोदी ही चुनाव प्रचार करते नजर आए.

आप जरा अंदाजा लगाइए कि 2014 के पहले भाजपा में ही लालकृष्ण आडवाणी, मुरलीमनोहर जोशी, सुषमा स्वराज, राजनाथ सिंह, नितिन गडकरी जैसे तमाम नेताओं की लोकप्रियता के अपने-अपने दायरे हुआ करते थे. अब मोदी और अमित शाह के अलावा शायद ही किसी की पूछ होती है. यह केंद्रीकरण सभी को अपने मातहत करने और अपनी मर्जी से सब कुछ चलाने की भूख भी पैदा करता है, जो सभी संस्थाओं को नष्ट कर रहा है. मामला सिर्फ सीबीआई और आरबीआई का ही नहीं है, अभी तो शायद गैरबैंकिंग संस्थाओं और बैंकों के ढहने के रूप में और बड़ा संकट कगार पर खड़ा इंतजार कर रहा है. कई जानकार कयास लगा रहे हैं कि अमेरिका में लीमन बदर्स के डूबने जैसा संकट आ सकता है.

बहरहाल, ये सभी संकट उसी केंद्रीकृत मनोवृत्ति और कामकाज की शैली के नतीजे हैं, जो दूसरों की हर राय को शंका की नजर से देखता है. लेकिन जब-जब ऐसा हुआ है, उसका अंत सुखद नहीं रहा है. अक्सर ऐसे नेता अपनी जिद में देश को मुश्किल के कगार पर खड़ा करते रहे हैं. इंदिरा गांधी का उदाहरण हमारे सामने है. इमरजेंसी ही नहीं, बाद के दौर में पंजाब समस्या में भी वे ऐसी उलझीं कि उसका नतीजा भयावह हुआ. इसके उलट विकेंद्रीकरण और सबको अहमियत देने की राजनीति के परिणाम ही सुखद रहे हैं.

पूर्व प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह कहा करते थे कि विरोधाभासों का सामंजस्य ही राजनीति का मर्म है. अलबत्ता, उसमें वे बुरी तरह नाकाम भी साबित हुए. हालांकि शायद इसे ही साधने के चक्कर में वे मंडल आयोग की रिपोर्ट पर अमल करके देश की राजनीति में एक नये परिवर्तन के वाहक बन गए. लेकिन विरोधाभासों को अपने काबू में करने और अंततः उन्हें कुचल डालने या बेमानी बना देने की कोशिशों के नतीजे क्या होते हैं, उसके नजारे आजाद भारत के इतिहास में इस रूप में पहले शायद ही दिखे हों.

हरिमोहन मिश्र.

इंटरनेशनल मीडिया

मी टू का असर

हैशटैग ₹मी टू' आंदोलन की आंच ने भारतीय मीडिया और फिल्म उद्योग को जिस तरह हिलाकर रख दिया है, उससे पाकिस्तान को भी सबक लेने की जरूरत है. वहां आलोक नाथ जैसे पुराने कलाकार हो. यहां गिल्ड, यूनियन और एसोसिएशन नाम की कोई चीज ही नहीं है, जो ऐसे मामलों में कुछ कर सके. और क्या इंडस्ट्री को ही ऐसे लोगों पर सख्त कदम उठाने के लिए तैयार नहीं रहना चाहिए, जिस पर कई

THE EXPRESS TRIBUNE

को सिने ऐंड टीवी आर्टिस्ट एसोसिएशन (सिन्टा) ने महिला कलाकारों के यौन उत्पीड़न की शिकायतों के बाद निलंबित कर दिया, जिसे सिन्टा का ऐतिहासिक कदम माना जा रहा है. ऐसे सख्त फैसले न सिर्फ आधिकारिक स्तर पर ₹मी टू' जैसे स्त्री अस्मिता से जुड़े जरूरी आंदोलन को मजबूती देने वाले हैं, बल्कि पाकिस्तान जैसे समाजों के लिए नजीर भी प्रस्तुत करते हैं, जहां मर्दवाद अपने जहरीले रूप में मौजूद है और महिला उत्पीड़न आम बात. हालांकि सच यही है कि हम न तो ऐसे आंदोलनों को पहचानने वाले देश हैं, न ही उसके असर को समझने वाले.

पाकिस्तानी मनोरंजन उद्योग, खासकर संगीत, फिल्म और रंगमंच की दुनिया में सिन्टा जैसी एक भी संस्था नहीं है, जिसकी सदस्यता मिलना या जिसके सख्त फैसलों से सदस्यता छिन जाने का कोई मतलब पीड़ित आरोप लगा चुके हों? उसे इतना सक्षम तो होना ही चाहिए कि शिकायतकर्ता और आरोपित को अपनी बात रखने के लिए वह कोई उपयुक्त आधिकारिक मंच दे सके. यूनाइटेड प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन, जो भारतीय और तुर्की मनोरंजन सामग्री पर प्रतिबंध लगाने का मौका तलाशने में ही सक्रिय रहती है, उसे भी ₹मी टू' से निकली उन कहानियों की चिंता नहीं है, जो परदे के पीछे लगातार चर्चा और चिंता में बनी हुई हैं. फिल्म प्रोड्यूसर्स एसोसिएशन ऑफ पाकिस्तान भी अभी तक लाहौर बनाम कराची, यानी पुराने गार्ड बनाम नए गार्ड की लड़ाई से ही निजात नहीं पा सकी है. ये गंभीर मामले हैं, जिनके लिए गहन समाधान की जरूरत है. समझना होगा कि ये ऐसे मामले हैं, जिनके लिए बतौर एक उद्योग, हम किसी भी नजरिए से तैयार नहीं हैं.

द एक्सप्रेस ट्रिब्यून, पाकिस्तान.

आज का सुविचार

उन घरों में जहाँ मिट्टी के घड़े रहते हैं,
कद में छोटे हों मगर लोग बड़े रहते हैं.

प्रतिदिन

जनकल्याण की राह

एक बार अयोध्या के राजा रघु के दरबार में इस प्रश्न पर बहस चल रही थी कि राजकोष का उपयोग किन प्रयोजनों के लिए किया जाए. एक पक्ष का मत था कि सैन्य शक्ति बढ़ाई जाए ताकि न केवल अपनी सुरक्षा हो बल्कि राज्य के विस्तार की योजना भी आगे बढ़े. इस अभियान पर जो खर्च होगा उसकी भरपाई पराजित देशों से मिलने वाले संसाधनों से की जा सकेगी. दूसरे पक्ष का कहना था कि राजकोष प्रजा जन के हित में खर्च किया जाए ताकि उनका जीवन स्तर पढ सके. अगर सुखी, संतुष्ट साहसी और सहदय नागरिक हों तो देश समृद्ध होता है. इस प्रकार युद्ध करके नए क्षेत्र जीतने की अपेक्षा मैत्री का विस्तार कहीं अधिक लाभदायक है. उससे स्वेच्छया सहयोग और अपनत्व की ऐसी उपलब्धियां प्राप्त होती है, जिनके कारण छोटा देश भी चक्रवर्ती स्तर का बन सकता है.

दोनों पक्षों के तर्क चलते रहे. सबके मन में उत्सुकता थी कि आखिर राजा रघु क्या निर्णय देते हैं. जब सबने अपनी बात समाप्त की तब उन्होंने कहा- युद्ध पीढियों से लड़े जाते रहे हैं. उनके कड़वे-मीठे परिणाम भी स्मृति पटल पर अंकित हैं. लेकिन इस बार युद्ध छोड़ दिया जाए और लोकमंगल को अपनाया जाए, देखते हैं क्या होता है. समस्त संपत्ति जनकल्याण की योजनाओं पर खर्च कर दी जाए. कुछ सभासद दबे-छुपे इस निर्णय की आलोचना करने लगे. उन्हें अनिष्ट की आशंका सताने लगी. उधर रघु के निर्णय के मुताबिक विकास योजनाएं तेज कर दी गई. धीरे-धीरे प्रजाजन हर दृष्टि से समुन्नत हो गए. आक्रमण की चचाएं समाप्त हो गई. सुख-शांति के समाचार पाकर अन्य देशों के समर्थ लोग वहां आकर बसने लगे. बंजर भूमि सोना उगलने लगी और अयोध्या में खुशहाली फैल गई.

नेटीजन

आगा हश्र कश्मीरी

अल्लाह मियां के सामने लाये गये आगा साहब ने कहा था- या रब तेरी कौसर (दैवी शराब) में न वो तल्खी है, न वो मस्ती है/ मुझको जो पिलानी हो, दुनिया से मंगाकर दे.

मशहूर नाटककार, निर्देशक और शायर आगा हश्र कश्मीरी (1879-1935) के बारे में कहा जाता है कि वह खुद अपने बारे में लतीफे गढ़ा करते थे. उन्हीं का अपना गढ़ा हुआ एक ऐसा ही मजेदार लतीफा मैंने कहीं पढ़ा था. लतीफा कुछ इस तरह है कि मरने के बाद जनाब आगा हश्र कश्मीरी साहब जन्नत पहुंचे. अल्लाह मियां को जब पता चला कि दुनिया से एक ऐसा नायाब आदमी आया है, जो जिंदगी भर पीता-पिलाता ही रहा, तो हुक्म हुआ कि आगा साहब को हौज ए कौसर के सामने वाली कोठी अलॉट कर दी जाए. जन्नत में शराब को कौसर कहा जाता है, जिसके वहां तमाम सारे हौज और नदियां हैं.कुछ दिनों के बाद अल्लाह मियां को अचानक आगा साहब की याद आई और उन्होंने फरिश्तों से कहा कि जाकर देखो, आगा साहब का क्या हाल है? फरिश्ते गए और उन्होंने देखा कि आगा साहब बहुत उदास बैठे हुए हैं. फरिश्तों ने उनसे पूछा, हुजूर शराब की नदी के सामने आपका यह हाल?' आगा साहब ने कहा, इस सवाल का जवाब तो मैं अल्लाह मियां को दूंगा. उन्हें अल्लाह मियां के सामने लाया गया, तो आगा साहब ने कहा- या रब तेरी कौसर (दैवी शराब) में न वो तल्खी है, न वो मस्ती है/ मुझको जो पिलानी हो, दुनिया से मंगाकर दे. **असगर वजाहत की फेसबुक वॉल से.**

तब और अब भी

बाल दिवस और बच्चे

14 नवम्बर की शाम दिल्ली में बारिश हुई थी और उस बारिश में जब मैंने छोटे बच्चों को सड़कों पर भीगत-ठिठुरते खिलौने और फूल बेचते हुए देखा, तो दिल टूट-सा गया.

बचपन में हम देशवासी पंडित नेहरू के जन्मदिन को बाल दिवस के रूप में मनाया करते थे. जब तक पंडितजी जीवित थे, 14 नवम्बर को बच्चों को प्रधानमंत्री निवास में बुलाया जाता था और उनके बीच बैठकर प्रधानमंत्री तस्वीरें खिंचवाया करते थे. एक बात जो मुझे आज भी याद है, वह यह कि, अंग्रेजों का राज जब समाप्त हुआ था, तब इस देश में हम एक सुई तक नहीं बना पाते थे और आज देखो, अपनी जरूरत की सारी चीजें हम खुद ही बना रहे हैं. इसके लिए हमें पंडित जी का रोज धन्यवाद करना चाहिए.

पिछले सप्ताह उनकी जन्मतिथि पर किसी ने याद नहीं किया कि यह देश के बच्चों के लिए खास दिन हुआ करता था. ऐसा क्यों? क्या इसलिए कि पंडितजी ने बेशक भारत के लिए बहुत कुछ किया होगा, लेकिन बच्चों के मामले में हम यहां तक पहुंचे हैं कि आज भी इस देश का हर दूसरा बच्चा कुपोषित माना जाता है? आज भी सरकारी स्कूलों का इतना बुरा हाल है कि जिन बदकिस्मत बच्चों को उनके मां-बाप की आर्थिक मजबूरियों के कारण इन पर निर्भर रहना पड़ता है, वे पूरी पढ़ाई करने के बाद भी अनपढ़ रहते हैं. इतना बुरा हाल है इन स्कूलों का कि पीआईएसए (प्रोग्राम फॉर इंटरनेशनल स्टुडेंट एसेसमेंट) नाम की अंतरराष्ट्रीय स्पर्धा में जब हम अपने बच्चों को भेजते हैं, तो एक या दो मामूली गरीब देशों के बच्चे ही उनसे अनपढ़ साबित होते हैं. यह देख हमारी सरकार का सिर शर्म से ऐसा झुका कि हमने इस स्पर्धा में अपने बच्चों को भेजना ही बंद कर दिया है.

ऐसा नहीं है कि मैं इस देश के बेहाल बच्चों का सारा दोष पंडित जी पर डाल रही हूं, लेकिन यह जरूर कहना चाहती हूं कि उन्होंने हमारे बच्चों में वास्तव में निवेश किया होता, तो आज शायद वे इतने बेहाल न होते. काश, कि उनके पोषण में कम से कम इतना निवेश हुआ होता कि स्कूल में उन्हें एक समय का खाना जी भरकर मिलता, जैसे आज कई राज्यों में अक्षयपात्र जैसी संस्थाओं के जरिये उनको मिलता है. काश, कि उनको पीने का पानी इतना प्रदूषित न मिलता. आज भी देश के बच्चे ऐसी बीमारियों से मरते हैं, जो गंदे पानी और गंदगी से फैलती हैं.

पंडित जवाहरलाल नेहरू महान व्यक्ति थे, लेकिन यह शायद अच्छा ही है कि हमारी सरकार पिछले सप्ताह भूल गई थी कि उनकी जन्मतिथि हम कभी बाल दिवस के रूप में मनाया करते थे. यह इसलिए कि जितना उन्होंने इस देश के लिए किया, उतना इस देश के बच्चों के लिए नहीं किया. मेरा मानना है कि आज भी इस देश की सबसे बड़ी आवश्यकता हमारे बच्चों में निवेश करने की है. 14 नवम्बर की शाम दिल्ली में बारिश हुई थी और उस बारिश में जब मैंने छोटे बच्चों को सड़कों पर भीगत-ठिठुरते खिलौने और फूल बेचते हुए देखा, तो दिल टूट-सा गया. जब भी अपने महानगरों में बच्चे देर रात काम करते दिखते हैं, तब दिल टूटता है. **मिनल सिंह.**

आपकी बात

कोई तो मौका छोड़ें

हमारे कृषिप्रधान देश के सभी त्यौहार प्रकृति से संबंधित है, जो हमारे जीवन में एक बदलाव की तरह आते हैं. अपने रामपुरी कैम्प की बात करूं तो यहां हर त्यौहारों और सम्मेलनों के दौरान भी वोट की राजनीति जारी रहती है, और ऐसा बीते 15 सालों से होता आ रहा है. ऐसा करने वालों में बड़े जाने-पहचाने चेहरे हैं.

दिवाली मिलन, होली मिलन, जनेऊ, युवक-युवती परिचय सम्मेलन मिलकर मनाये जाते रहे हैं, पर इन सबके बीच खेली जाती वोटों की राजनीति देखकर मन उदास हो जाता है. कभी तो लगता है कि इससे तो अच्छा घर पर ही त्यौहार मना लिया जाना चाहिये. **मोतीराम मनोजा**, अमरावती.

प्रतिदिन अखबार

यह पत्र मालिक, प्रकाशक, सम्पादक नानक आहूजा द्वारा देविका वेब प्रिंटर्स, राजापेठ, अमरावती से मुद्रित कर 'प्रतिदिन अखबार' कार्यालय, देविका परिसर, ब्राह्मण सभा के पीछे, दरोगा प्लॉट, राजापेठ, अमरावती 444 606 से प्रकाशित किया है. फोन-0721-2560155/56/57/58 फैक्स-0721-2677708 E-mail :- pratidinnews@gmail.com 'प्रतिदिन अखबार' में प्रकाशित होनेवाले विभिन्न लेख, पत्र, साहित्य, लेखकों, कवियों आदि के विचारों या तथ्यों पर आधारित होते हैं. इन लेखकों के विचारों अथवा तथ्यों से संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है. संपादक पर मात्र सम्पादकीय लेखों का ही दायित्व है. संपादक-नानक आहूजा, समाचार संपादक-प्रवीण आहूजा.